International Journal of Advanced Research in Education and TechnologY(IJARETY)

SSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 6.421| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 8, Issue 5, September 2021 ||

सिद्ध साधना में परवर्ती संप्रदायों के विकास की विवेचना

DR. YASHWANT SHAURYA

ASSISTANT PROFESSOR, HEAD OF DEPT. OF HISTORY, MAULANA AZAD UNIVERSITY, BUJHAWAR, JODHPUR, RAJASTHAN, INDIA

सार

हिन्दी साहित्य में काल क्रम के अनुसार आदि काल दसवीं शताब्दी से लेकर चौदहवीं शताब्दी तक जाता है | इस काल को साहित्यिक परम्पराओं के निर्माण का काल भी कहा जाता है | इसी काल मे रचनाएँ संस्कृत और हिन्दी अपभ्रंश से निकलकर धीरे धीरे मुक्ति की ओर अग्रसर हो रही थी और अपना स्वरूप ग्रहण कर रही थी | सिद्ध साहित्य एवं नाथ साहित्य अपभ्रंश से प्रभावित हैं तथा रासो रचनाएं (बीसलदेव रासो ,प्रथ्वीराज रासो ,परमाल रासो एवं खुसरो की पहेलियाँ अपभ्रंश से मुक्त हैं | इस काल की रचनाओं का अवलोकन करे तो हमें यहाँ चार प्रमुख साहित्यिक धाराएं दिखाई देती हैं -जैन धारा, सिद्ध धारा,नाथ धारा और लौकिक धारा | जैन धारा स्वयंभू ,पुष्प दंत से लेकर श्यड्यू तक मानी जाती है | सिद्ध धारा -84 सिद्धों में सरहपा से लेकर तिलोपा तक ,नाथ धारा-गोरक्ष नाथ सहित नवनाथों तक और लौकिक धारा में शेष साहित्यकार आते हैं |

परिचय

हिन्दी के आरंभिक कवि किसी न किसी धार्मिक संप्रदाय से जुड़े थे अतः वे भक्त पहले थे ओर कवि बाद में | उनका साहित्य सृजन का प्रमुख उद्देश्य अपने धरम का प्रचार करना ,सदाचार का उपदेश देना ,जीवन में नैतिकता का प्रतिपादन कर जेएन जागरण करना | उनका लौकिक पक्ष कम और आध्यात्मिक पक्ष अधिक था |[1,2]

जैन साहित्यकारों का लेखन दो प्रकार का था ... प्राचीन जैन ऋषियों की प्रतिलिपि करना तथा निज अनुभव एवं आँय धार्मिक /सामाजिक प्रक्रियाओं को आलेखबद्ध करना | जैन साहित्य विवरणात्मक धार्मिक साहित्य है क्योंकि इसमें ऐतिहासिक सूचनाएं प्राप्त होती हैं | उनका इतिहास प्रामाणिक माना जा सकता है क्योंकि जैन मुनि ,आचार्य किसी राज्य के आश्रय मे नहीं थे ,उन्हें किसी को किसी को खुश तो करना नहीं था ,अतः उन्हें घटनाओं को जोडतोडकर कल्पना से बताने की जरूरत ही नहीं थी ,जैसा हम परवर्ती रासो साहित्य में देखते हैं | चरित्र ,महापुराण ,स्वयंभू छंद जैन रचनाओं में मिलते है | उनकी रचनाएँ संस्कृत तथा अपभ्रंश में अधिकांश धर्म प्रवण हैं परंतु उनमें रस अलंकृत विधाओं का प्रयोग मिलता है | इन रचनाओं मे प्रबंध काव्य ,फागु चौपाई ,स्वागत गीत प्राकृत भाषा में मिलते हैं | कर्म प्रधान होते हुये भी जैन साहित्य शुष्क या नीरस नहीं है | जैन आचार्यों ने दार्शनिकता ,धार्मिकता के साथ –साथ मानवीय भावों पर यथा प्रेमख्यान ,विरह,शौर्य ,कथा ,कविता और चरित काव्य लिखे |इनकी रचनाओं मे काव्यात्मकता की कोई कमी नहीं दिखाई देती है | पुष्पदंत की रचनाओं में महापुराण पायकुमार चरित प्रमुख हैं | हिन्दी को पहला कवि जैन साहित्य ने दिया ,पुष्प दंत के रूप में ,हालांकि विद्वानों में इस विषय में मतभेद हैं |

बौद्ध धर्म की सहजयान शाखा जो तंत्र मंत्र और गुह्य साधना को अपनाती हुयी 8वीं शताब्दी में अत्यंत विकृत होकर एक नए संप्रदाय को जिसे वज्रयान कहा गया | इसके अनुगामी ही सिद्ध कहलाए | ये भारत के पूर्वी भाग में सक्रिय थे। इनकी संख्या ८४ मानी जाती है जिनमें सरहप्पा, शवरप्पा, लुइप्पा, डोम्भिप्पा, कुक्कुरिप्पा आदि मुख्य हैं। सरहप्पा प्रथम सिद्ध कवि थे। इन्होंने जातिवाद और वाह्याचारों पर प्रहार किया। देहवाद का महिमा मण्डन किया और सहज साधना पर बल दिया। ये महासुखवाद द्वारा ईश्वरत्व की प्राप्ति पर बल देते हैं।

बौद्ध धर्म के वज्रयान तत्व का प्रचार करने के लिए जो साहित्य देश भाषा (जनभाषा) में लिखा गया वही सिद्ध साहित्य कहलाता है। यह साहित्य बिहार से लेकर असम तक फैला था। राहुल संकृत्यायन ने ८४ सिद्धों के नामों का उल्लेख किया है जिनमें सिद्ध 'सरहपा' से यह साहित्य आरम्भ होता है। बिहार के नालन्दा विद्यापीठ इनके मुख्य अड्डे माने जाते हैं। बाद में यह 'भोट' देश चले गए। इनकी रचनाओं का एक संग्रह महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने बांग्ला भाषा में 'बौद्धगान-ओ-दोहा' के नाम से निकाला। सिद्धों की भाषा में 'उलटबासी' शैली का पूर्व रुप देखने को मिलता है। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने सिद्ध साहित्य की प्रशंसा करते

SSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 6.421| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 8, Issue 5, September 2021 ||

हुए लिखा है कि, "जो जनता तात्कालिक नरेशों की स्वेच्छाचारिता, पराजय त्रस्त होकर निराशा के गर्त में गिरी हुई थी, उनके लिए इन सिद्धों की वाणी ने संजीवनी का कार्य किया। साधना अवस्था से निकली सिद्धों की वाणी 'चरिया गीत / चर्यागीत' कहलाती है।

सिद्ध साहित्य को मुख्यतः निम्न तीन श्रेणियों में विभाजित किया जाता है:- (१) नीति या आचार संबंधित साहित्य (२) उपदेश परक साहित्य और (३) साधना सम्बन्धी या रहस्यवादी साहित्य[3,4]

सिद्ध साहित्य की विशेषताएँ :
इस साहित्य में तंत्र साधना पर अधिक बल दिया गया।

साधना पद्धति में शिव-शक्ति के युगल रूप की उपासना की जाती है।

इसमें जाति प्रथा एवं वर्णभेद व्यवस्था का विरोध किया गया।

सिद्धों में पंच मकार (मांस, मछली, मदिरा, मुद्रा, मैथुन) की दुष्प्रवृति देखने को मिलती है।इसी भोग की प्रवृति के स्थान पर गोरक्षपा जिसे बाद मे गोरक्ष नाथ कहा गया ,ने नाथ संप्रदाय की स्थापना की जिसमे भोग के स्थानपर योग पर ज़ोर दिया |गोरक्ष नाथ सहित नव नाथों की रचनाओं में धार्मिक ,दार्शनिक एवं स्वानुभूतिजन्य रचनाएँ ही प्रमुख हैं | नाथ सिद्धों /मुनियों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से ईश्वर में श्रद्धा ,सत्संग ,गुरु का महत्व ,कथनी ओर करनी में एकता ,जाति भेद का विरोध ,नारी विरोध ,बाह्य आडंबर का विरोध ,अटपटी वाणी (उलटबासी) और यौगिक चमत्कारों की ओर जन – सामान्य को अपनी ओर आकृष्ट किया | इस काल की अनेक रचनाओं हमें पढ़ने को मिलती हैं | परवर्ती काल के अनेक संत साहित्यकार ,ज्ञानेश्वर ,कबीर इसके सशक्त उदाहरण हैं |

नाथ धारा की रचनाओं मे जीवन की स्वाभाविक सरणियों ,अनुभूतियों एवं दशाओं से कोई प्रत्यक्ष संबंध नहीं हैं ,अतः शुद्ध साहित्य की कोटि में रखने में विद्वान सहमत नहीं है किन्तु इनका महत्व परम्पराओं के उद्गम स्रोत एवं उनकी ऐतिहासिकता व्याख्या की दृष्टि से अवश्य है |

वर्तमान में प्रासंगिकता :
आदि काल के साहित्य के अध्ययन से हमें पता चलता है कि उस काल में सामाजिक विसंगतियाँ जैसे छूआछूत ,जातीय ऊंच – नीच, ,धार्मिक कट्टरपन एवं समान मानवीय अधिकारों का अभाव जिसके विरुद्ध तत्कालीन संतों,मुनियों और नाथ -सिद्ध /योगियों अपनी वाणी मुखरित कर कर जन सामान्य को प्रभावित कर समतामूलक समाज की स्थापना पर दिया | आज भी देश में बढ़ती हुयी धार्मिक कट्टरता ,आर्थिक ,सामाजिक और राजनैतिक असमानता ,समाजों के मध्य बढ़ती हुयी खाई ,प्रतिद्वंद्वता एवं अशांति सर्वत्र दृष्टिगोचर हैं | पूरे विश्व में युद्ध के बादल छाए हैं | आर्थिक प्रभुसत्ता को लेकर विश्व की महाशक्तियाँ जैसे अमेरिका ,चीन ,रूस और यूरोप विकासशील देशों को व्यवसायिक युद्ध में धकेल रहे है | इसके लिए हमें किसी नए बाहरी ज्ञान या शिक्षा की अवश्यकता नहीं है अपितु हिन्दी के महान आदि कवियों की स्वानुभूति से संपृक्त वाणियों /रचनाओं में समानता ,शांति ,बंधुत्व और सहिष्णुता के अंतर्निहित सूत्र तलाश कर उनका अनुशीलन करना होगा ,तभी देश का कल्याण एवं समग्र विकास होगा |

विचार-विमर्श

तंत्र वेदों में नहीं है, फिर भी उसके प्रभाव एवं प्रामाणिकता को नकारा नहीं जा सकता। हाथों में लगाई जाने वाली मेहंदी, आंगन द्वारों पर चित्रित की जाने वाली अल्पना, बालक के संध्या काल पैदा होने पर लगाए जाने वाले स्वास्तिक और डलिया की आकृति, दीपावली और अन्य त्योहारों पर सजाई गई रंगोली आदि तंत्र के प्रतीक हैं। शिव जी स्वयं तंत्र के देवता हैं। तंत्र की प्रामाणिकता सिद्ध करने वाला तंत्र शास्त्र का प्रत्येक ग्रंथ शिव के उपदेश से ही प्रारंभ होता है। अतः कहा जा सकता है कि तंत्र शास्त्र को मानव तक पहुंचाने वाले स्वयं शिव ही हैं। इसीलिए वह तांत्रिकों के आदि देव हैं। समस्त भौतिक विस्तार और आध्यात्मिक अनंत तंत्र का विषय है। वाराही तंत्र के अनुसार तंत्र के नौ लाख श्लोकों में एक लाख श्लोक भारत में हैं। तंत्र साहित्य विस्मृति, विनाश और उपेक्षा का शिकार होता आ रहा है। तंत्र शास्त्र के अनेक गं्रथ नष्ट हो चुके हैं किसी ग्रंथ में तंत्र ग्रंथ के उल्लेख व उद्धरण

ISSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 6.421| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 8, Issue 5, September 2021 ||

से ही पता चलता है कि अमुक तंत्र ग्रंथ भी था। मूल ग्रंथ उपलब्ध नहीं होता। आज प्राप्त सूचनाओं के अनुसार 199 तंत्र ग्रंथ हैं। जिनमें अधिकांश अनुपलब्ध हैं।

वाराही तंत्र का यह विवरण कि भारत में एक लाख तंत्र श्लोक हैं नौ लाख श्लोकों की संख्या से असत्य इसलिए नहीं होता कि मूलतः उन एक लाख श्लोकों का ही विस्तार उन नौ लाख श्लोकों में है। तंत्र का विस्तार ईसा पूर्व से तेरहवीं शताब्दी तक बड़े प्रभावशाली रूप में भारत, चीन, तिब्बत, थाईदेश, मंगोलिया, कंबोज आदि देशों में रहा। तंत्र को तिब्बती भाषा में ऋगयुद कहा जाता है। समस्त ऋगयुद 78 भागों में है जिनमें 2640 स्वतंत्र ग्रंथ हैं। इनमें कई ग्रंथ भारतीय तंत्र ग्रंथों का अनुवाद हंै और कई तिब्बती तपस्वियों द्वारा रचित हंै। बुद्ध के अवतार के बाद बौद्ध धर्म के प्रसार के साथ तंत्रों को एक नया क्षेत्र मिला अर्थात तंत्र का लक्ष्य अब दूसरे प्रकार से भी सिद्ध होने लगा। तत्वतः भारतीय तंत्र के मूल तत्व ही बौद्ध साधना का अंग बने प्रारांतर में यत्किंचित परिवर्तन हो गया। इस दृष्टि से बुद्ध स्वयं तांत्रिक थे। नौवीं से ग्यारहवीं सदी तक बौद्ध-तंत्रों का ही चीनी और तिब्बती भाषा में अनुवाद होता रहा। इन तंत्र ग्रंथों में गुह्य क्रियाकांड, उपदेश, स्तोत्र, कवच, मंत्र और पूजा विधि का वर्णन किया गया है। भारतीय तंत्र शिवोक्त हैं और बौद्ध तंत्र बुद्धोक्त।[5,6]

भूटान में अतीश का नाम बहुत प्रसिद्ध है। ऐतिहासिक प्रमाणों के अनुसार वह बंगाली थे। ग्यारहवीं शताब्दी में उन्होंने तिब्बत और भूटान जैसे देशों में तंत्र का प्रचार किया। असल में गौड़ और बंग देश ही तंत्र का केंद्र थे। गुजराती में लिखे "आगम प्रकाश" में उल्लेख है कि अहमदाबाद, पावागढ़, पाटन और डवोई नगरों में देवी मंदिरों का निर्माण एवं प्राण प्रतिष्ठा बंगालियों द्वारा की गई। राजस्थान में कई देवी मंदिर हैं जिनमें बंगाली ही पूजक हैं। वैष्णव सम्प्रदाय में आदिशक्ति की उपासना गौरी, गायत्री और लक्ष्मी के रूप में की जाती है। लक्ष्मी और गौरी, क्रमशः विष्णु और शिव की अर्धांगिनी होने के कारण पूज्य हैं। स्वतंत्र शक्ति के रूप में केवल वेदमाता गायत्री का रूप ही पूज्य है। वैष्णव संप्रदाय की साधना विधि में भी कर्मकांड है, पर वह तांत्रिक विधि जैसी नहीं है। गंभीरता से देखने पर सारे संप्रदायों और वादों का समाहार तंत्र की पूर्व पीठिका में ही हो जाता है। यहां तक कि योग जैसा विषय भी तंत्र का अंग बन जाता है। तांत्रिक विधि से आत्म साधन करने वाले को ज्ञान भी चाहिए, कर्म भी चाहिए और भक्ति भी। योग इन सबसे जुड़ा हुआ है। शंकर के पूर्ववर्ती बौद्ध भी तंत्र के प्रभाव में आ चुके थे। बुद्ध की घुंघराले बालों वाली प्रतिमा विशुद्ध रूप से तांत्रिक परिकल्पना है। बालों की घुंडियां सहस्रार के अगणित दलों की प्रतीक हैं। नाथ संप्रदाय में सिद्धि पद प्राप्त करने वालों में इतनी उत्कट शक्ति आ जाती थी कि जागतिक भावनाएं और संसार के पदार्थ उन्हें नहीं छू पाते थे।

मछन्दरनाथ, गोरखनाथ और नागार्जुन की अलौकिक सिद्धियों से संसार परिचत है। इन सिद्धों ने तंत्र से रहस्य लेकर अपनी साधना विधि निश्चित की और मंत्र विद्या में सरल एवं सुगम प्रयोग किया। आज जिन्हें प्राकृत या साबर मंत्र कहते हैं, वे इसी नाथ संप्रदाय की देन हैं। उन मंत्रों में संस्कृत शब्द नहीं है। बोलचाल के और किंचित रूप में रहस्यपूर्ण शब्दों से निर्मित ये मंत्र पूरा काम करते हैं। असल में इन शाबर मंत्रों में वज्रयान की वज्रडाकिनी अथवा वज्रतारा आदि से भी निकृष्ट कोटि के तामसिक देवों की प्रार्थना की जाती है, उनकी आन पर ही काम होता है। मुसलमानों के धर्मग्रंथ कुरान के अनुसार झाड़फूंक और मंत्रोपासना निषिद्ध है अर्थात अल्लाह से दुआ मांगने के सिवा किसी मंत्र का रूप कुरान की आयत नहीं है और न उसे सिद्ध करने की आज्ञा है। फिर भी साबर मंत्रों में मुहम्मद पीर की आन ली जाती है। विस्मिल्लाह के नाम की आन के साथ कुरान की आयत या साबरी विधि से शब्द-संयोजन कर के मंत्र की रचना कर ली जाती है। नाथ संप्रदाय भी तंत्र मार्ग की ही एक शाखा रहा है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि तंत्र वैदिक मार्ग नहीं है।

इसलिए इसका आधार वेद में ढूंढना युक्तिसंगत नहीं। यक्षिणी साधना शिव उवाचः श्री शंकर जी कहते हैं कि अब मैं आगे यक्षिणियों के साधन प्रयोग का भली प्रकार वर्णन करता हूं जिसके सिद्ध हो जाने पर मनुष्यों की संपूर्ण कामनाएं सिद्ध हो जाती हैं। सर्वेषां यक्षिणीनां तु ध्यान कुर्यात्समाहितः। भगिनी मातृ, पुत्री स्त्री रूप तुल्य यथोप्सितम्

।। 1।। भावार्थः खूब सावधानी के साथ यक्षिणियों की साधना करनी चाहिए। यक्षिणी को इच्छानुसार बहन, माता, पुत्री या स्त्री के समान मान कर उनके रूपों का सावधानी से ध्यान करना चाहिए क्योंकि असावधानी होने पर सिद्धि प्राप्ति में बाधा पड़ जाती है। भोज्य निरामिषे चान्नं वज्र्य ताम्बूल भक्षणम्। उपविश्याजिनादौ च प्रातः स्नानत्वा न कंस्पृशत्

।। 2।। भावार्थः यक्षिणियों की सिद्धि करने में निरामिष (मांस रहित) भोजन करना चाहिए। पान आदि का भक्षण छोड़ दें, प्रातः काल स्नान कर मृगछाला पर बैठें, किसी का स्पर्श न करें।। नित्य कृत्या च कृत्वा तु स्नाने निर्जने जपेत। या प्रत्यक्षरा याति यक्षिणा वांछतध्ृराृवांः

।। 3 ।। भावार्थः अपने नित्य कर्म से निवृत्त होकर स्नान करके एकांत स्थान में बैठ कर जप करना चाहिए। जप तब तक करते रहें जब तक कि मनवांछित फल को देने वाली यक्षिणी प्रत्यक्ष रूप से न आ जाए।

SSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 6.421| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 8, Issue 5, September 2021 ||

महा यक्षिणी साधना मंत्र: ¬ क्लीं ह्रीं ¬ ओं श्री महा यक्षिणी सवैश्यर्य प्रदायिन्यै नमः। मंत्र के तीन हजार बेल के वृक्ष पर बैठकर एक महीने तक जप प्रति दिन करें। आलस्य को बिलकुल त्याग दें। जहां पर जप करना हो वहां पर मांस, मदिरा तथा बलिदान पहले ही से रख लंे। अनेक रूप धारण करने वाली यक्षिणी आ जाए तो उसे देख कर डरें नहीं और जप करते रहें। जिस समय यक्षिणी बलिदान वगैरह लेकर वरदान देने को उद्यत हो उस समय जो इच्छा अपने दिल में आवे, वह वरदान स्वरूप उस से मांग लंे। यदि यक्षिणी पूर्ण रूप से प्रसन्न हो जाए तो सब कुछ दे सकती है।यदि कोई इस प्रयोग को स्वयं न कर सके तो ब्राह्मण से भी करा सकता है या किसी ब्राह्मण की सहायता से इस प्रयोग की साधना कर सकता है। इस दौरान तीन कन्याओं को प्रतिदिन पवित्र खीर का भोजन कराकर तृप्त करें। यक्षिणियों द्वारा जो कुछ प्राप्त हो, उसे शुभ कार्य में खर्च करें क्योंकि अशुभ कार्यों में खर्च करने से सिद्धि भंग हो जाती है।

धनदा यक्षिणी साधना मंत्र: अर्थदायी यक्षिणी च धनं प्राप्नोति मानवः।। ¬ ऐं ह्रीं श्रीधनं धनं कुरु कुरु फट् स्वाहा। इस मंत्र के 10000 जप करें। भावार्थ: यह यक्षिणी साधना पीपल के वृक्ष के नीचे एकाग्रचित्त होकर करनी चाहिए। इससे मनुष्य को धन की प्राप्ति होती है। पीपल वृक्ष के नीचे सावधानी से एकाग्रचित्त होकर निम्नलिखित मंत्र का जप करें। इससे अपुत्र को पुत्र की प्राप्ति होती है। शिवजी कहते हैं कि हमारा यह कथन मिथ्या नहीं है।[7,8]

मंत्र: ¬ ह्रीं ह्रीं ह्रीं पुत्रा कुरु-कुरु स्वाहा। इस मंत्र का 1000 बार जप कर सिद्धि कर लें।

चण्डिका यक्षिणी प्रयोग मंत्र:¬ चण्डिके हंसः क्रीं क्रीं क्रीं क्लीं स्वाहा। विधि: इस मंत्र का जप शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से पूर्णिमा तक रात के समय करना चाहिए। जप चंद्रमा के उदय होने से लेकर अस्त तक करते रहें। इस मंत्र की संख्या प्रतिपदा से पूर्णिमा तक नौ लाख है। इसके करने से देवी प्रसन्न होकर अमृत देती है जिसके पान से मनुष्य अमर हो जाता है।

हंसि यक्षिणी प्रयोग मंत्र: ¬ हंसि हंसि क्लीं स्वाहा विधि: पवित्रतापूर्वक नगर के भीतर प्रवेश कर के इस मंत्र के एक लाख जप करें। तत्पश्चात् दशम भाग को कमल की पत्तियों तथा घी के साथ मिलाकर हवन करें। ऐसा करने से देवी एक प्रकार का ऐसा अंजन देती है, जिसे नेत्र में लगाने से पृथ्वी में गड़ा धन दिखाई देने लगता है। उसे निर्विघ्न खोद कर निकाल सकते हैं।

मदनी यक्षिणी प्रयोग मंत्र: ¬ मदने बिडम्बिनी अनंग संग सन्देहि देहि क्लीं क्रीं स्वाहा। विधि: एकाग्रचित्त होकर शुद्धतापूर्वक इस मंत्र का एक लाख बार जप करें। और दूध, घी, चमेली के फल मिलाकर अग्नि में एक हजार आहुति दें। ऐसा करने से यह यक्षिणी एक प्रकार का गुटका देती है जिसे मुख में रखने से मनुष्य अदृश्य हो जाता है।

कर्ण पिशाचिनी यक्षिणी प्रयोग: मंत्र: ¬ क्रीं समान शक्ति भगवती कर्ण पिशाचनी चंद्र शेपनी वद-वद स्वाहा। विधि: सबसे पहले इस मंत्र को 10000 बार जप लें। तत्पश्चात ग्वार पाठे के गुच्छे को अपनी हथेलियों पर मल कर शयन करें तो रात के समय देवी सब शुभाशुभ फल कह देगी।

चिचि पिशाचिनी यक्षिणी प्रयोग: मंत्र: ¬ क्री ह्रीं चिचि पिशाचिनी स्वाहा। विधि: गोरोचन, केसर और दूध को मिलाकर नीले रंग के भोज पत्र पर अष्टदल कमल बनाएं। तत्पश्चात हरेक दल पर माया बीज लिख कर सिर पर धारण करें। फिर मंत्र का जप पहले सात दिन तक यथासंख्यक करें। शुद्धतापूर्वक जप करने से यह देवी स्वप्न में तीनों काल (भूत, भविष्य, वर्तमान) का हाल कह जाएगी।

काल कर्णिक साधना मंत्र: ¬ ह्रीं क्रीं कालकर्णिके कुरु-कुरु ठः ठः स्वाहा। विधि पहले इस मंत्र का एक लाख बार जप करें और ढाक मंदार की लकड़ी, घी, शहद का हवन करें। ऐसा करने से काल कर्णिका प्रसन्न होकर अनेक प्रकार का धन तथा ऐश्वर्य देती है। अप्सरा साधना साधना विधि: यह साधना 51 दिनों की है। किसी भी पूर्णमासी की रात्रि से यह साधना प्रारंभ की जा सकती है। घर के किसी कोने में सफेद आसन बिछा कर उत्तर की ओर मुंह कर के बैठ जाएं। सामने घी का अखंड दीपक प्रज्वलित करें और स्वयं पानी में गुलाब जल या गुलाब का थोड़ इत्र डाल कर स्नान कर स्वच्छ सफेद वस्त्र धारण कर आसन पर बैठ जाएं और सामने श्री अप्सरा यंत्र रखें और अप्सरा सौंदर्य माला से मंत्र जप करें मंत्र: ¬ श्रीं क्लीं अप्सरा प्रत्यक्ष श्रीं ऐं फट्।।

मंत्र जप समाप्ति के बाद उसी स्थान पर सो जाएं। इन 51 दिनों में न तो किसी से बात करें और न ही उस कमरे से बाहर जाएं। केवल शौचादि क्रिया करने के लिए बाहर जा सकते हैं। सातवें दिन घुंघरुओं की मधुर आवाज सुनाई देती है। मगर साधक को चाहिए कि वह अविचलित भाव से मंत्र जप करता रहे। इक्कीसवें दिन बिलकुल ऐसा लगे जैसे अपूर्व सी सुगंध फैल गई है। इसके बाद नित्य ऐसी सुगंध का आभास होगा। 36वें दिन लगेगा कि कोई अद्वितीय सुंदरी आसन के पास बैठ गई है। मगर साधक अविचलित न हो और मंत्र जप करता रहे।

SSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 6.421| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 8, Issue 5, September 2021 ||

47 वें दिन परीक्षा आरंभ होगी और लगेगा कि वह सुंदरी सशरीर साधक की गोद में बैठ गई है। साधक को विचलित होने की आवश्यकता नहीं है। 51 वें दिन वह अपूर्व शृंगार कर साधक से सट कर बैठ जाएगी और पूछेगी कि मेरे लिए क्या आज्ञा है। तब साधक कहे कि मेरी पत्नी बन कर प्रेमिका की तरह प्रसन्न करो। तब वह सिद्ध हो जाएगी और जीवन भर सुख, द्रव्य, वैभव व काम प्रदान करती रहेगी। यह साधना एक बार करने से सिद्ध हो जाती है। बार-बार नहीं करनी पड़ती। साधना में तीन बातें आवश्यक हैं: Û साधना काल में 51 दिन तक किसी से कुछ न बोलें। Û साधना के बाद अप्सरा सिद्ध हो जाने पर परस्त्रीगमन न करें। Û अपसरा तंत्र सिद्ध होने पर उस के साथ रमण करें और जो भी चाहें प्राप्त करें परंतु द्रव्य का दुरुपयोग न करें।

परिणाम

सिद्धों की भोग-प्रधान योग-साधना की प्रतिक्रिया के रूप में आदिकाल में नाथपंथियों की हठयोग साधना आरम्भ हुई। इस पंथ को चलाने वाले मत्स्येन्द्रनाथ (मछंदरनाथ) तथा गोरखनाथ (गोरक्षनाथ) माने जाते हैं। इस पंथ के साधक लोगों को योगी, अवधूत, सिद्ध, औघड़ कहा जाता है। कहा यह भी जाता है कि सिद्धमत और नाथमत एक ही हैं। सिद्धों की भोग-प्रधान योग-साधना की प्रवृत्ति ने एक प्रकार की स्वच्छंदता को जन्म दिया जिसकी प्रतिक्रिया में नाथ संप्रदाय शुरू हुआ। नाथ-साधु हठयोग पर विशेष बल देते थे। वे योग मार्गी थे। वे निर्गुण निराकार ईश्वर को मानते थे। तथाकथित नीची जातियों के लोगों में से कई पहुंचे हुए सिद्ध एवं नाथ हुए हैं। नाथ-संप्रदाय में गोरखनाथ सबसे महत्वपूर्ण थे। आपकी कई रचनाएं प्राप्त होती हैं। इसके अतिरिक्त चौरन्गीनाथ, गोपीचन्द, भरथरी आदि नाथ पन्थ के प्रमुख कवि है। इस समय की रचनाएं साधारणतः दोहों अथवा पदों में प्राप्त होती हैं, कभी-कभी चौपाई का भी प्रयोग मिलता है। परवर्ती संत-साहित्य पर सिध्दों और विशेषकर नाथों का गहरा प्रभाव पड़ा है। गोरक्षनाथ के जन्मकाल पर विद्वानों में मतभेद हैं। राहुल सांकृत्यायन इनका जन्मकाल 845 ई. की 13वीं सदी का मानते हैं। नाथ परम्परा की शुरुआत बहुत प्राचीन रही है, किंतु गोरखनाथ से इस परम्परा को सुव्यवस्थित विस्तार मिला। गोरखनाथ के गुरु मत्स्येन्द्रनाथ थे। दोनों को चौरासी सिद्धों में प्रमुख माना जाता है। गुरु गोरखनाथ को गोरक्षनाथ भी कहा जाता है। इनके नाम पर एक नगर का नाम गोरखपुर है। गोरखनाथ नाथ साहित्य के आरम्भकर्ता माने जाते हैं। गोरखपंथी साहित्य के अनुसार आदिनाथ स्वयं भगवान शिव को माना जाता है। शिव की परम्परा को सही रूप में आगे बढ़ाने वाले गुरु मत्स्येन्द्रनाथ हुए। ऐसा नाथ सम्प्रदाय में माना जाता है। गोरखनाथ से पहले अनेक सम्प्रदाय थे, जिनका नाथ सम्प्रदाय में विलय हो गया। शैव एवं शाक्तों के अतिरिक्त बौद्ध, जैन तथा वैष्णव योग मार्गी भी उनके सम्प्रदाय में आ मिले थे। गोरखनाथ ने अपनी रचनाओं तथा साधना में योग के अंग क्रिया-योग अर्थात तप, स्वाध्याय और ईश्वर प्रणीधान को अधिक महत्व दिया है। इनके माध्यम से ही उन्होंने हठयोग का उपदेश दिया। गोरखनाथ शरीर और मन के साथ नए-नए प्रयोग करते थे। गोरखनाथ द्वारा रचित ग्रंथों की संख्या ४० बताई जाती है किन्तु डा. बड़थ्वाल ने केवल १४ रचनाएं ही उनके द्वारा रचित मानी है जिसका संकलन 'गोरखबानी' मे किया गया है। जनश्रुति अनुसार उन्होंने कई कठिन (आड़े-तिरछे) आसनों का आविष्कार भी किया।[9,10] उनके अजूबे आसनों को देख लोग अचम्भित हो जाते थे। आगे चलकर कई कहावतें प्रचलन में आईं। जब भी कोई उल्टे-सीधे कार्य करता है तो कहा जाता है कि 'यह क्या गोरखधंधा लगा रखा है।' गोरखनाथ का मानना था कि सिद्धियों के पार जाकर शून्य समाधि में स्थित होना ही योगी का परम लक्ष्य होना चाहिए। शून्य समाधि अर्थात समाधि से मुक्त हो जाना और उस परम शिव के समान स्वयं को स्थापित कर ब्रह्मलीन हो जाना, जहाँ पर परम शक्ति का अनुभव होता है। हठयोगी कुदरत को चुनौती देकर कुदरत के सारे नियमों से मुक्त हो जाता है और जो अदृश्य क़ुदरत है, उसे भी लाँघकर परम शुद्ध प्रकाश हो जाता है। सिद्ध योगी : गोरखनाथ के हठयोग की परम्परा को आगे बढ़ाने वाले सिद्ध योगियों में प्रमुख हैं :- चौरंगीनाथ, गोपीनाथ, चुणकरनाथ, भर्तृहरि, जालन्ध्रीपाव आदि। 13वीं सदी में इन्होंने गोरख वाणी का प्रचार-प्रसार किया था। यह एकेश्वरवाद पर बल देते थे, ब्रह्मवादी थे तथा ईश्वर के साकार रूप के सिवाय शिव के अतिरिक्त कुछ भी सत्य नहीं मानते थे। नाथ सम्प्रदाय गुरु गोरखनाथ से भी पुराना है। गोरखनाथ ने इस सम्प्रदाय के बिखराव और इस सम्प्रदाय की योग विद्याओं का एकत्रीकरण किया। पूर्व में इस समप्रदाय का विस्तार असम और उसके आसपास के इलाकों में ही ज्यादा रहा, बाद में समूचे प्राचीन भारत में इनके योग मठ स्थापित हुए। आगे चलकर यह सम्प्रदाय भी कई भागों में विभक्त होता चला गया।

सिद्धों ने बौद्ध धर्म के बज्रयान तत्व का प्रचार करने के लिए जो साहित्य जनभाषा मैं लिखे है वही हिंदी साहित्य के सिद्ध साहित्य के सीमा के अंतर्गत आता है।

जैसा की उपर उल्लेखित कुल चौरासी सिद्धों मैं से आदि सिद्ध के रूप मैं सरहपा को माना जाता है, तथा उनके अलावा सबरपा, लुइपा, डोम्भिपा, कण्हपा और कुकरीपा आदि के नाम प्रमुख माना जाता है। यहां संक्षेप में उनके व्यक्तित्व तथा उनके कृतियों का वर्णन किया जा रहा है।

सरहपा (Sarhapa) :-

सरहपा के रचना सरहपाद, सरोजवज्र, राहुलभद्र आदि कई नामों से प्रख्यात हैं। जाति से ये ब्राह्मण थे। इनके रचना-काल के विषय में सभी विद्वान एकमत नहीं हैं क्योंकी इनका कोई ठोस प्रामाणिक तत्व नहीं मिलता है।

राहुल संस्कृतायन जी ने इनका समय 761 ई. माना है और इसके सम्मति अधिकांश विद्वान् देते है। इनके द्वारा रचित बत्तीस ग्रंथ बताए जाते हैं, जिनमें से 'दोहाकोश' हिंदी की रचनाओं में सबसे ज्यादा प्रसिद्ध है। इन्होंने पाखंड और आडंबर का विरोध किया है तथा मुख्य रूप से गुरु-सेवा को महत्त्व दिया है। ये सहज भोगमार्ग से जीव को महासुख की ओर ले जाते हैं। इनकी भाषा सरल तथा गेय है एवं काव्य में भावों का सहज प्रवाह मिलता है।

शबरपा (Shabrapa):-

इनका जन्म क्षत्रिय कुल में 780 ई. में मानाजाता है। यह भी माना जाता है की इन्होंने सरहपा से ज्ञान प्राप्त किया था। शबरों के जैसाजीवन व्यतीत करने के कारण ये शबरपा कहे जाते थे। "चर्यपद" इनकी प्रसिद्ध पुस्तक है। ये माया मोह का विरोध करके सहज जीवन पर बल देते हैं और उसी को ही महासुख की प्राप्ति का मार्ग बतलाते हैं।

लुइपा (Luipa):-

ये राजा धर्मपाल के शासन काल में कायस्थ परिवार में उत्पन्न हुए थे। शबरपा ने इन्हें अपना शिष्य बनाया था इनकी साधना का प्रभाव देखकर उड़ीसा के तत्कालीन राजा तथा मंत्री इनके शिष्य हो गए थे। चौरासी सिद्धों में इनका सबसे ऊँंचा स्थान माना जाता है। इनकी कविता में रहस्य – भावना की प्रधानता है।

होम्भिपा (Hombhipa) :-

मगध साम्राज्य के क्षत्रिय वंश में 840 ई. के लगभग इनका जन्म माना जाता है। विरूपा से इन्होंने दीक्षा ली थी। इनके द्वारा रचित इक्कीस ग्रंथ बताए जाते हैं, जिनमें "डोम्बि -गीतिका", "योगचर्या", "अक्षरद्विकोपोदेश" आदि विशेष प्रसिद्ध हैं।

कण्हपा (Kanhapa):-

इनका जन्म 820 ई. में कर्नाटक के किसी ब्राह्मण परिवार मैं माना जाता है। बिहार के सोमपुरी नामक स्थान पर ये बसबास करते थे। जलनधरपा को इन्होंने अपना गुरु बनाया था। कई सिद्धों ने इनकी शिष्यता स्वीकार की थी। इनके लिखे ग्रंथो की संख्या चौहत्तर बताए जाते हैं, जिनमें अधिकांश दार्शनिक विषयों पर हैं।

रहस्यात्मक भावनाओं से परिपूर्ण गीतों की रचना करके ये हिंदी के कवियों में प्रसिद्ध हुए। इन्होंने शास्त्रीय रूढ़ियों का भी खंडन किया है।

कुकरीपा (Kukripa) :-

इनका जन्म कपिलवस्तु के एक ब्राह्मण कूल में माना जाता है। इनके जन्म काल का प्रामाणिकता का पता नहीं चल सका है। चर्पटीया इनके गुरु थे। इनके द्वारा रचित सोलह-ग्रंथ माने जाते हैं। ये भी सहज जीवन के ही समर्थक थे।[11]

SSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 6.421| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 8, Issue 5, September 2021 ||

निष्कर्ष

सिद्धों ने बौद्ध परंपरा में चली आती हुई निर्वाण भावना का तिरस्कार कर जीवन में महासुख की अनुभूति को ही प्रमुखता प्रदान की है।बौद्ध धर्म में निर्वाण के तीन मुख्य अवयव ठहराए गए हैं – शून्य, विज्ञान और महासुख। बज्रयान में सिर्फ महासुख का प्रवर्तन हुआ।

वज्धयान में निर्वाण के सुख का स्वरूप ही सहवास सुख के समान बताया गया है, इसलिए सिद्धों के साहित्य में प्रणय के प्रसंग अधिक हैं। हाँ, यह भी हो सकता है की सिद्धों के इस प्रणय का गहन आध्यात्मिक अर्थ हो, लेकिन उन्होंने जिस लौकिक शब्दावली में व्यक्त किया है, वह भी साहित्य के लिए कम महत्वपूर्ण नहीं है।

कण्हपा के डोम्बी गीत में डोम्बी के प्रति कपाली का प्रेम निवेदन अत्यंत ही संवेदनशील प्रतीत होता है। कण्हपा जब डोम्बी नारी का चित्रण करते हैं तो उसमें लोकजीवन की डोम्बी नारी का यथार्थ चित्र उपस्थित हो जाता है।

सिद्ध साहित्य के प्रणय प्रसंगों में लोकजीवन के चित्र जो आए वे बड़े ही मौलिक हैं। उनमें जिस बिंब का प्रयोग हुआ है, वे भी पूरी तरह से नए हैं। उदाहरण स्वरूप शबरपा एक शबरी बालिका वर्णन करते हैं, जिसमें शबरी बालिका का भोला-भाला चित्र है। इस अबोध बालिका वर्णन जिस प्रकार मैं है वह शास्त्रीय शब्दावली में मुग्धा नायिका है।

इस प्रकृति तथा नायिका के वर्णन में एक मासूमियत है। यह मासूमियत शास्त्रीय साहित्य की नायिका के रूप वर्णन से अलग है। उसमें सामंती साहित्य के नायक और नायिका की तरह उपभोग का वर्णन नहीं है, नायिका को मात्र विलास की वस्तु नहीं समझा गया है।

इस वर्णन को पढ़कर ऐसा अनुभव होता है कि सिद्ध रचनाकारों ने उस दलित और पीड़ित वर्ग को अपने साहित्य में स्थान दिया जो समाज में निचले स्थान पर थे। जिनका वर्णन तत्कालीन आधुनिक साहित्य में आवश्यक नहीं समझा जाता था।

डोम्बी और शबरी का वर्णन कुछ उसी प्रकार का है। समाज के निम्न स्तर पर जी रहे लोगों को सिद्धों ने अपना काव्य नायक बनाया, जो की साहित्य के इतिहास में सिद्धों का क्रांतिकारी योगदान है।

सिद्ध साहित्य की काब्यानुभूति को समझने के बाद उनकी भाषा को भी समझना उतना ही आवश्यक है। सिद्धों ने अपनी दार्शनिक अनुभूति को लोकनमुखित करने के लिए प्रतीक भाषा का प्रयोग किया है। उस प्रतीक विशेष को समझे बिना हम उनकी दार्शनिक अनुभूति को कभी समझ ही नहीं सकते और इसी भाषा को पंडित महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने संधा भाषा कहा है।

इस भाषा की शैली धूप-छांव की शैली के रूप मैं वर्णन किया गया है। इस भाषा में शब्द के बाहरी और आंतरिक अर्थ हमेशा अलग होते हैं। शब्दों की इसी द्वयार्थक प्रकृति का परिचय संधा भाषा में मिलता है। वस्तुतः संधा भाषा संश्लिष्ट अनुभूति की भाषा थी। जिसमें शब्दों का एक अर्थ लोकानुभव से संबद्ध है तो दूसरा अर्थ दार्शनिक अनुभूतियों की व्यंजना करता है।

इस भाषा के लौकिक अर्थ कभी- कभी लोकविरुद्ध भी होते थे, जिसे सामान्यतः उलटबाँसी के रूप में समझा जाता है। यह सत्य है कि सिद्धों के साहित्य में दार्शनिक अनुभूति और साधनापरक रहस्यवाद की उक्तियाँ भरी पड़ी हैं पर यहाँ योग क्रिया के जटिल विधान का कर्मकांड भी प्रचार परिमाण में मिलता है, और उसमें मानवीय अनुभूतियों की स्वाभाविक दशाओं का वर्णन भी मिलता है।

SSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 6.421| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 8, Issue 5, September 2021 ||

क्यूंकि सिद्ध साहित्य के बिंब मुख्य रूप से निम्न और दलित जातियों के जीवन व्यापार से जुड़े हुए हैं,इसीलिए उन्होंने प्रबंध काव्य और खंडकाव्य के स्थान पर गीति और मुक्तक काव्य में रचना की है। सिद्धों ने भाषा में अपभ्रंश के साहित्यिक बर्चस्व के जगह देशभाषा को अपने रचनाओं का आधार बनाया, जो उनके साहित्यिक अवदान को मौलिक बनाता है।

क्यों की सिद्धों की कब्यारचन का मूल तत्कालीन शासन तथा जीवन व्यवस्था पर प्रहार करना तथा उसको एक नई दिशा देना ही था, तो यह जायस है की उनकी भाषा मूल रूप से विद्रोही ही रही थी। पर आचार्य शुक्ल के मुताबिक इन भाषाओं (अपभ्रंश या प्राकृताभास हिंदी) में रचना होने का पता हमें विक्रम की सातवीं शताब्दी में ही मिल जाता है।

आचार्य शुक्ल बौद्धों, सिद्धों की रचनाओं से हिंदी भाषा का प्रारंभ मानते हैं परंतु वे इनकी रचनाओं को स्वाभाविक साहित्य में स्थान देने के पक्षधर नहीं हैं। उन्होंने साहित्य के इतिहास में दूसरी जगह यह भी लिखा है कि उनकी रचनाओं का जीवन की स्वाभाविक प्रथाओं, अनुभूतियों और दशाओं से कोई संबंध नहीं। वे सांप्रदायिक शिक्षा मात्र हैं, अतः वे शुद्ध साहित्य की कोटि में नहीं आ सकतीं।

उन रचनाओं की परंपरा को हम काव्य या साहित्य की कोई धारा नहीं कह सकते। आचार्य शुक्ल के इन दोनों वक्तव्यों के आपस में ही अंतर्विरोध है। वे साहित्य को भाषा और अनुभूति की दो अलग-अलग श्रेणियों में बाँटकर देखना चाहते हैं जो की कभी ठीक लगता है और कभी ठीक नही लगता।

उन्हें हिंदी भाषा का विकास तो सिद्धों की रचनाओं से मिलता दिखाई देता है, लेकिन अनुभूति के धरातल पर सिद्धों से उनका विरोध हो जाता है।

सिद्धों की विद्रोही अनुभूति को अपभ्रंश की रूढ़ होती हुई भाषा में नहीं रचा जा सकता था, इसीलिए सिद्धों के लिए एक नई भाषा की तलाश अनिवार्य हो गई थी, जिसके लिए उनकोने तत्कालीन जनभाषा को अपने साहित्य मैं शामिल किया और उससे विचारों का बिस्तर भी आसान हो गया।

तत्कालीन भाषा का प्रचलन समूर्ण हिंदी या फिर अभी प्रचलित हिंदी भाषा नही थी, और संस्कृत भाषा से हिंदी भाषा की प्रक्रिया लभग आरंभ हो चुकी थी। और कहीं न कहीं सिद्ध संप्रदाय की विद्रोह मनोभाव तथा उनके जनभाषा रूपी साहित्य प्रसार हिंदी भाषा के विकास में मूल स्तंभ के रूप सहायक हुई थी।[12]

संदर्भ

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास, सम्पादक-डा॰ नगेन्द्र, संस्करण १९८५, प्रकाशक- नेशनल पब्लिशिंग हाउस, २३ दरियागंज, नयी दिल्ली-११००२, पृष्ठ- ७९
2. Dasgupta, Sashibhusan (1995). Obscure Religious Cults, Firma K.L.M., Calcutta, ISBN 81-7102-020-8, pp.203ff, 204
3. ↑ Shastri Haraprasad (ed.) (1916, 3rd edition 2006). Hajar Bacharer Purano Bangala Bhasay Bauddhagan O Doha (in Bengali), Kolkata: Vangiya Sahitya Parishad, pp.xxxv-vi
4. Gorakhnāth and the Kānphaṭa Yogīs - George Weston Briggs
5. गोरख दर्शन - गोरखनाथ मंदिर, गोरखपुर
6. Philosophy of Gorakhnath: With Goraksha-Vacana-Sangraha - Akshaya Kumar Banerjea
7. Omacanda Hāṇḍā. Buddhist Art & Antiquities of Himachal Pradesh, Up to 8th Century A.D. Indus Publishing. p. 71.
8. ↑ Briggs (1938), p. 249

SSN: 2394-2975 | www.ijarety.in| | Impact Factor: 6.421| A Bi-Monthly, Double-Blind Peer Reviewed & Referred Journal |

|| Volume 8, Issue 5, September 2021 ||

9. ↑ "राजनीति की धुरी रहा है योगी का गोरखनाथ मठ". मूल से 19 मार्च 2017 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 19 मार्च 2017.
10. प्रमाणसागर, मुनि (२००८), जैन तत्त्वविद्या, भारतीय ज्ञानपीठ, आई॰ऍस॰बी॰ऍन॰ 978-81-263-1480-5, मूल से 6 मार्च 2016 को पुरालेखित, अभिगमन तिथि 28 फ़रवरी 2016
11. जैन, विजय कुमार (२०११), आचार्य उमास्वामी तत्तवार्थसूत्र, Vikalp Printers, आई॰ऍस॰बी॰ऍन॰ 978-81-903639-2-1
12. Salomon, Richard. Indian Epigraphy: A Guide to the Study of Inscriptions in Sanskrit, Prakrit, and the Other Indo-Aryan Languages. New York: Oxford University Press, 1998.